11105CH03

अध्याय 3

सामाजिक संस्थाओं को समझना

1

परिचय

यह पुस्तक समाज और व्यक्ति की अंत:क्रिया के बारे में चर्चा से आरंभ होती है। हमने देखा कि हममें से प्रत्येक का एक व्यक्ति की तरह समाज में एक स्थान या स्थिति होती है। प्रत्येक की एक प्रस्थिति और एक या अनेक भूमिकाएँ होती हैं लेकिन साधारणत: इनका चुनाव करना हमारे नियंत्रण में नहीं होता। ये भूमिकाएँ चलचित्रों की भूमिकाओं की तरह नहीं होती जिन्हें कोई अभिनेता अपनी इच्छा से स्वीकार या अस्वीकार कर सके। यहाँ सामाजिक संस्थाएँ होती हैं जो प्रतिबंधित और नियंत्रित, दंडित और पुरस्कृत करती हैं। सामाजिक संस्थाएँ राज्य की तरह बृहत या परिवार की तरह लघु हो सकती हैं। इस अध्याय में हमारा परिचय सामाजिक संस्थाओं से होगा और यह भी बताया जाएगा कि समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानवविज्ञान में इनका अध्ययन किस प्रकार होता है। इस अध्याय में कुछ प्रमुख क्षेत्रों जिनमें महत्त्वपूर्ण सामाजिक संस्थाएँ जैसे (क) परिवार, विवाह और नातेदारी, (ख) राजनीति, (ग) अर्थव्यवस्था, (घ) धर्म एवं (ड़) शिक्षा होती है, इनका संक्षिप्त वर्णन किया गया है।

विस्तृत अर्थ में संस्था उसे कहा जाता है जो स्थापित या कम से कम कानून या प्रथा द्वारा स्वीकृत नियमों के अनुसार कार्य करती है और उसके नियमित तथा निरंतर कार्य चालन को इन नियमों को जाने बिना समझा नहीं जा सकता। संस्थाएँ व्यक्तियों पर प्रतिबंध लगाती हैं, साथ ही ये व्यक्तियों को अवसर भी प्रदान करती हैं।

संस्थाओं को स्वयं में लक्ष्य के रूप में भी देखा जा सकता है। वास्तव में लोगों ने परिवार, धर्म, राज्य या यहाँ तक कि शिक्षा को भी अपने आप में एक लक्ष्य के रूप में माना है।

क्रियाकलाप-1

लोगों द्वारा परिवार, धर्म, राज्य के लिए बलिदान देने के उदाहरणों के बारे में सोचें।

हम पहले ही देख चुके हैं कि समाजशास्त्र के अंतर्गत संकल्पनाओं को समझने में अनेक प्रकार की भिन्नताएँ और विरोधाभास हैं। हमारा परिचय प्रकार्यवादी और संघर्षवादी दृष्टिकोण से भी कराया गया है। हमने यह भी देखा है कि कैसे उन्होंने एक ही विषय-वस्तु को विभिन्नता से देखा, जैसे स्तरीकरण या सामाजिक नियंत्रण। इसलिए इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि सामाजिक संस्थाओं के बारे में भी विभिन्न प्रकार की समझ है।

एक प्रकार्यवादी दृष्टि सामाजिक संस्थाओं को सामाजिक मानकों, आस्थाओं, मूल्यों और समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए निर्मित संबंधों की भूमिका के जटिल ताने-बाने के रूप में देखती है। सामाजिक संस्थाएँ समाजिक ज़रूरतों को पूरा करने के लिए विद्यमान होती हैं। इस प्रकार समाज में हमें औपचारिक और अनौपचारिक सामाजिक संस्थाएँ देखने को मिलती हैं। जैसे परिवार और धर्म अनौपचारिक सामाजिक संस्था के जबकि कानून और शिक्षा (औपचारिक) औपचारिक सामाजिक संस्थाओं के उदाहरण हैं।

एक संघर्षवादी दृष्टि की मान्यता है कि समाज में सभी व्यक्तियों का स्थान समान नहीं है। सभी सामाजिक संस्थाएँ चाहे वे पारिवारिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, कानूनी या शैक्षणिक हों, समाज के प्रभावशाली अनुभागों चाहे वे वर्ग, जाति, जनजाति या लिंग के संदर्भ में हों, के हित में संचालित होती हैं। प्रभावशाली सामाजिक अनुभागों का न केवल राजनीतिक और आर्थिक संस्थाओं पर प्रभुत्व होता हैं अपितु वे यह भी सुनिश्चित करते हैं कि शासक वर्ग के विचार ही समाज के विचार बन जाएँ। यह विचार इस से बहुत भिन्न हैं कि किसी समाज की सामान्य आवश्यकताएँ होती हैं।

जैसे-जैसे आप इस अध्याय का आगे अध्ययन करेंगे, देखें कि क्या आप ऐसे उदाहरणों के बारे में सोच सकते हैं कि कैसे सामाजिक संस्थाएँ व्यक्तियों को नियंत्रित करती हैं तथा अवसर भी प्रदान करती हैं। आप यह भी देखें कि क्या वे समाज के विभिन्न अनुभागों पर असमान प्रभाव डालती हैं। उदाहरण के लिए हम पूछ सकते हैं, "कैसे परिवार पुरुषों और महिलाओं को नियंत्रित करने के साथ-साथ अवसर भी प्रदान करता है?" या "राजनीतिक या कानूनी संस्थाएँ विशेष सुविधा प्राप्त और अधिकार विहीन व्यक्तियों को कैसे प्रभावित करती हैं?"

2

परिवार, विवाह और नातेदारी

शायद परिवार जितनी 'नैसर्गिक' कोई अन्य सामाजिक संस्था नहीं दिखाई देती है। प्रायः हम यह मानने को तैयार रहते हैं कि सभी परिवार वैसे ही होते है जैसे परिवारों में हम रहते हैं। कोई और सामाजिक संस्था इतनी व्यापक और अपरिवर्तनीय नहीं दिखती है। समाजशास्त्र और सामाजिक मानवविज्ञान ने कई दशकों तक विभिन्न संस्कृतियों में यह दर्शाने के लिए क्षेत्रीय अनुसंधान किए कि कैसे विभिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न स्वरूप होते हुए भी परिवार, विवाह और नातेदारी संस्थाएँ सभी समाजों में महत्त्वपूर्ण हैं। उन्होंने

यह भी दर्शाया कि किस प्रकार परिवार (निजी क्षेत्र) आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक (सार्वजनिक क्षेत्रों) से संबंधित है। यह आपको पुनः याद दिला सकता है कि विभिन्न विषयों से लेन-देन की आवश्यकता क्यों पड़ती है जिसकी चर्चा हमने अध्याय 1 में की है।

प्रकार्यवादियों के अनुसार परिवार अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य करता है जो समाज की बुनियादी आवश्यकताएँ पूरी करते हैं और सामाजिक व्यवस्था को स्थायी बनाने में सहायता करते हैं। प्रकार्यवादी दृष्टिकोण का तर्क है कि यदि महिलाएँ परिवार की देखभाल करें और पुरुष परिवार की जीविका चलाएँ तो आधुनिक औद्योगिक समाज श्रेष्ठ कार्य निष्पादन करते हैं। तथापि भारत में किए गए अध्ययन यह सुझाव देते हैं कि अर्थव्यवस्था के औद्योगिक प्रतिमानों में परिवारों को मूल होने की आवश्यकता नहीं है (सिंह 1993:83)। फिर भी यह एक उदाहरण है जिससे पता चलता है कि एक समाज के अनुभवों पर आधारित प्रवृत्ति का सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता है।

प्रकार्यवादियों के अनुसार मूल परिवार को औद्योगिक समाज की आवश्यकताएँ पूरी करने वाली एक सर्वोत्तम साधन संपन्न इकाई के रूप में देखा जाता है। ऐसे परिवार में घर का एक सदस्य घर से बाहर कार्य करता है और दूसरा सदस्य घर और बच्चों की देखभाल करता है। व्यावहारिक रूप से मूल परिवार में भूमिकाओं के इस विशिष्टीकरण में पति की जीविका चलाने वाले 'सहायक' की तथा पत्नी की घरेलू संरचना में 'प्रभावशाली' भावनात्मक भूमिका शामिल रहती है (गिडिंस 2001)। इस दृष्टि पर न केवल अनुचित लिंगभेद के कारण प्रश्न किया जा सकता है अपितु, इतिहास और अनेक संस्कृतियों के आनुभविक अध्ययन दर्शाते हैं कि यह सत्य नहीं है। वास्तव में आप कार्य और अर्थव्यवस्था की चर्चा में देखेंगे कि वस्त्र निर्यात जैसे समकालीन उद्योग में महिलाएँ श्रमिक बल का बहुत बड़ा हिस्सा हैं। इस तरह का विभाजन यह भी सुझाता है कि पुरुष ही आवश्यक रूप से परिवार के मुखिया हैं। नीचे दिया गया बॉक्स दर्शाता है कि यह अनिवार्यतः सत्य नहीं है।

महिला-प्रधान घर

जब पुरुष नगरीय क्षेत्रों में चले जाते हैं तो महिलाओं को हल चलाना पड़ता है और खेतों के कार्यों का प्रबंध करना पड़ता है। कई बार वे अपने परिवार की एकमात्र भरण-पोषण करने वाली बन जाती हैं। ऐसे परिवारों को महिला-प्रधान घर कहा जाता है। विधवापन भी ऐसी पारिवारिक व्यवस्था बना सकता है। यह स्थिति पुरुषों द्वारा दूसरा विवाह करने तथा अपनी पत्नियों, बच्चों और अन्य आश्रितों को धन न भेजने के कारण भी बन सकती है। ऐसी स्थिति में महिला को अपने परिवार की देखभाल सुनिश्चित करनी पड़ती है। दक्षिण-पूर्व महाराष्ट्र और उत्तरी आंध्र प्रदेश में कोलम जनजाति समुदाय में महिला-प्रधान घर एक स्वीकृत मानक है।

परिवार के स्वरूपों में परिवर्तन

भारत में एक मुख्य बहस मूल परिवार से संयुक्त परिवार की ओर बदलाव के बारे में है। हमने पहले भी देखा है कि समाजशास्त्र कैसे सामान्य बौद्धिक प्रभावों पर प्रश्न खड़ा करता है। तथ्य यह है कि भारत में मूल परिवार पहले से ही, विशेषत: अभावग्रस्त जातियों और वर्गों में, हमेशा विद्यमान रहे हैं।

समाजशास्त्री ए.एम. शाह का कथन है कि स्वतंत्रता के बाद भारत में संयुक्त परिवार में निरंतर वृद्धि हुई है। उनके अनुसार इसका मुख्य कारक था भारत में औसत आयु में वृद्धि होना। पुरुषों की आयु में यह वृद्धि 1941–50 से 1981–85 के दौरान 32.5 से 55.4 वर्ष तथा महिलाओं की आयु में 31.7 से 55.7 वर्ष हो गई थी। इसके परिणामस्वरूप बुज़ुर्ग लोगों (60 वर्ष या उससे अधिक आयु) की संख्या में काफ़ी वृद्धि हो गई थी। शाह लिखते हैं कि–

> हमें यह पूछना होगा कि ये वृद्ध किस तरह के घरों में रहते हैं? मैं यह मानता हूँ कि उनमें से अधिकतर संयुक्त घरों में रहते हैं (शाह 1998)।

यह पुन: एक व्यापक सामान्यीकरण है। लेकिन समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण हमें इस सामान्य बौद्धिक प्रभाव पर आँख बंद करके विश्वास करने के विरुद्ध सावधान करता है कि संयुक्त परिवार तेज़ी से कम हो रहे है। यह हमें सावधानीपूर्वक तुलनात्मक और आनुभविक अध्ययनों की आवश्यकता के प्रति भी सतर्क करता है।

अध्ययनों से पता चलता है कि किस तरह विभिन्न समाजों में परिवार के विभिन्न स्वरूप पाए जाते हैं। आवास के नियम के अनुसार कुछ समाज अपने विवाह और पारिवारिक प्रथाओं में मातृस्थानिक हैं और कुछ पितृस्थानिक। मातृस्थानिक परिवार में नव-दंपति पत्नी के अभिभावकों के साथ रहते हैं जबकि दूसरी स्थिति में नव-दंपति पति के अभिभावकों के साथ रहते हैं। पितृतंत्रात्मक परिवार संरचनाओं में अधिकार और प्रभाव पुरुषों के पास होते हैं जबकि मातृतंत्रात्मक परिवारों में निर्णय लेने में महिलाओं की प्रमुख भूमिका होती है। मातृवंशीय समाज मौजूद हैं पर मातृतंत्रीय समाजों के बारे में यह दावा नहीं किया जा सकता।

परिवार अन्य सामाजिक क्षेत्रों और पारिवारिक परिवर्तनों से संबंधित होते हैं

हमारे दैनिक जीवन में प्राय: हम परिवार को अन्य क्षेत्रों जैसे आर्थिक या राजनीतिक से भिन्न और अलग देखते हैं। फिर भी आप स्वयं देखेंगे कि परिवार, गृह, उसकी संरचना और मानक, बाकी समाज से गहरे जुड़े हुए हैं। एक रोचक उदाहरण जर्मन एकीकरण के अज्ञात परिणामों का है। 1990 के दशक में एकीकरण के बाद जर्मनी में विवाह प्रणाली में तेज़ी से गिरावट आई क्योंकि नए जर्मन राज्य ने एकीकरण से पूर्व परिवारों को प्राप्त संरक्षण और कल्याण की सभी योजनाएँ रद्द कर दी थीं। आर्थिक असुरक्षा की बढ़ती भावना के कारण लोग विवाह से इंकार करने लगे। इसे अनजाने परिणाम के रूप में भी जाना जा सकता है (अध्याय 1)।

परिवारों और आवासों में अंतर पर ध्यान दीजिए

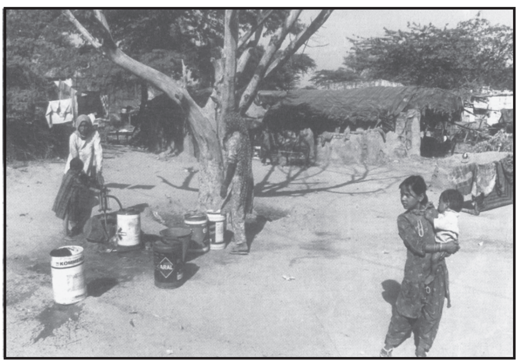

कार्य और गृह

इस प्रकार बड़ी आर्थिक प्रक्रियाओं के कारण परिवार और नातेदारी परिवर्तित और रूपांतरित होते रहते हैं लेकिन परिवर्तन की दिशा सभी देशों और क्षेत्रों में हमेशा एक समान नहीं हो सकती। हालाँकि इस परिवर्तन का यह भी अर्थ नहीं है कि पिछले मानक और सरंचना पूरी तरह नष्ट हो गई हैं। परिवर्तन और निरंतरता सहवर्ती होते हैं।

परिवार किस तरह लिंगवादी है?

इस विश्वास के कारण कि लड़का वृद्धावस्था में अभिभावकों की सहायता करेगा और लड़की विवाह के बाद दूसरे घर चली जाएगी, परिवारों में लड़कों पर अधिक धन खर्च किया जाने लगा। जीवविज्ञान के इस तथ्य के बावजूद कि लड़कों की अपेक्षा लड़कियों के जीवित रहने के अवसर

क्रियाकलाप-2

एक तेलुगू अभिकथन है–'एक लड़की का पालन करना दूसरे के आँगन में पौधे को पानी देने के बराबर है।' ऐसी या इसके विपरीत कहावतों का पता लगाइए। चर्चा कीजिए कि कैसे प्रसिद्ध कहावतों में समाज की सामाजिक व्यवस्था की झलक मिलती है।

भारत में 1901-2011 के बीच लिंगानुपात

वर्ष	*लिंगानुपात*	*वर्ष*	*लिंगानुपात*
1901	972	1961	941
1911	964	1971	930
1921	955	1981	934
1931	950	1991	926
1941	945	2001	933
1951	946	2011	940

कन्या भ्रूण हत्या की घटनाओं से लिंगानुपात में एकाएक गिरावट होने लगी। बाल लिंगानुपात 1991 में प्रति एक हज़ार लड़कों पर 934 से कम हो कर 2011 में 919 हो गया। बाल लिंगानुपात में प्रतिशत गिरावट अत्यधिक चौंकाने वाली है। समृद्ध राज्यों जैसे पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश में स्थिति और भी अधिक खराब है। पंजाब में प्रति एक हज़ार लड़कों के अनुपात में लड़कियों का अनुपात 846 हो गया है। हरियाणा के कुछ ज़िलों में यह 800 से भी कम हो गया है।

बेहतर होते हैं, भारत में अल्पायु समूह में लड़कियों की मृत्युदर लड़कों से कहीं अधिक थी।

विवाह संस्था

ऐतिहासिक रूप से विभिन्न समाजों में विवाह के व्यापक विभिन्न रूप पाए जाते हैं। यह विभिन्न प्रकार के कार्य निष्पादन के लिए भी जाना जाता है। वास्तव में विवाह-साथी की खोज का तरीका अनेक विस्मयकारी साधनों और प्रथाओं को उजागर करता है।

क्रियाकलाप-3

विभिन्न समाजों द्वारा विवाह के लिए साथियों की तलाश किए जाने वाले विभिन्न तरीकों का पता लगाइए।

विवाह के रूप

विवाह के अनेक रूप हैं। इन रूपों को विवाह करने वाले साथियों की संख्या और कौन किससे विवाह कर सकता है, को नियंत्रित किए जाने वाले नियमों के आधार पर पहचाना जा सकता है। वैधानिक रूप से विवाह करने वाले साथियों की संख्या के संदर्भ में विवाह के दो रूप पाए जाते हैं-(1) एकविवाह (2) बहुविवाह। एकविवाह प्रथा एक व्यक्ति को एक समय में एक ही साथी तक सीमित रखती हैं। इस व्यवस्था में किसी भी समय में पुरुष केवल

एक पत्नी और स्त्री केवल एक पति रख सकती हैं। यहाँ तक कि जहाँ बहुविवाह की अनुमति है वहाँ भी एकविवाह ही ज़्यादा प्रचलित है।

प्रायः कई समाजों में व्यक्तियों को पुनः विवाह की अनुमति पहले साथी की मृत्यु या तलाक के बाद दी जाती है लेकिन वे एक समय में एक से अधिक साथी नहीं रख सकते। ऐसे विवाह को क्रमिक एकविवाह कहा जाता है। अधिकांश भागों में पत्नी की मृत्यु के बाद पुरुषों द्वारा पुनर्विवाह करने का नियम हैं लेकिन आप सभी जानते हैं कि उच्च जाति की हिंदू महिलाओं के लिए पुनर्विवाह की स्वीकृति नहीं थी और 19वीं शताब्दी के सुधार आंदोलनों में विधवा पुनर्विवाह एक मुख्य विषय था। शायद आपको इस बारे में ज़्यादा जानकारी नहीं होगी कि आज आधुनिक भारत में महिलाओं की आबादी का लगभग 10 प्रतिशत और पचास वर्ष से अधिक आयु की 55 प्रतिशत महिलाएँ विधवा हैं (चेन 2000:353)।

बहुविवाह-प्रथा एक समय में एक से अधिक साथी होने का द्योतक है और इसमें या तो बहुपत्नी-प्रथा (एक पति और दो या अधिक पत्नियाँ) अथवा बहुपति-प्रथा (एक पत्नी और दो या अधिक पति) रूप होता है। प्रायः जहाँ आर्थिक स्थितियाँ कठोर होती हैं वहाँ बहुपति-प्रथा समाज की एक प्रतिक्रिया हो सकती है क्योंकि ऐसी स्थितियों में एक पुरुष पत्नी और बच्चों का पर्याप्त भरण-पोषण नहीं कर सकता है। अत्यधिक निर्धनता की अवस्थाएँ भी एक समूह पर अपनी आबादी सीमित रखने के लिए दबाव डालती हैं।

विवाह निश्चित करना : नियम और निर्देश

कुछ समाजों में विवाह-साथी के चयन का निर्णय अभिभावकों / संबंधियों द्वारा किया जाता हैं और कुछ अन्य समाजों में साथी का चयन करने में व्यक्तियों को अपेक्षाकृत कुछ स्वतंत्रता होती है।

अंतर्विवाह और बहिर्विवाह के नियम

कुछ समाजों में यह प्रतिबंध अति सूक्ष्म होते हैं जबकि कुछ अन्य समाजों में किस व्यक्ति से विवाह किया जा सकता है और किससे नहीं, के नियम अधिक स्पष्ट और विशेष रूप से परिभाषित होते हैं। विवाह-साथी की योग्यता/ अयोग्यता नियंत्रित करने वाले नियमों के आधार पर विवाह के रूपों को अंतर्विवाह और बहिर्विवाह के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

अंतर्विवाह में व्यक्ति उसी सांस्कृतिक समूह में विवाह करता है जिसका वह पहले से ही सदस्य है, उदाहरण के लिए जाति। इसके विपरीत बहिर्विवाह में व्यक्ति अपने समूह से बाहर विवाह करता है। अंतर्विवाह और बहिर्विवाह कुछ नातेदारी इकाइयों को संदर्भ के रूप में लिया जाता है, जैसे; गोत्र, जाति और नस्ल, प्रजातीय या धार्मिक समूह। भारत में विशेषतया उत्तरी भारत के कुछ भागों में गाँव बहिर्विवाह प्रचलित हैं। गाँव बहिर्विवाह यह सुनिश्चित करता है कि जिन परिवारों में लड़कियों का विवाह किया जाए वे घर से काफ़ी दूर हों। यह व्यवस्था लड़की के नातेदारों के हस्तक्षेप के बगैर उसके ससुराल में सुचारू परिवर्तन और समायोजन को सुनिश्चित करती है। भौगोलिक दूरी और पितृवंशीय व्यवस्था के असमान संबंध यह सुनिश्चित करते हैं कि

विवाहित लड़कियाँ अपने अभिभावकों के पास बार-बार न जा पाएँ। इस प्रकार जन्म-स्थान से अलग होना एक दुखदायी अवसर है और यह लोक गीतों की विषय-वस्तु है जो विदाई के दुख को चित्रित करते हैं।

पिताजी हम चिड़ियों के झुंड की तरह हैं
हम दूर उड़ जाएँगी : और हमारी उड़ान बहुत लंबी होगी,
हमें नहीं मालूम कि हम कहाँ जाएँगी,
पिताजी, मेरी पालकी आपके घर से नहीं जा सकती,
(क्योंकि द्वार बहुत छोटा है)
बेटी, मैं एक ईंट निकाल दूँगा
(तुम्हारी पालकी के लिए द्वार बड़ा करने के लिए)
तुम्हें अपने घर अवश्य जाना होगा।
(चानना 1993 : डब्लू.एस.26)

मैं अपनी बच्ची को पालने में झुलाता हूँ, और
उसके सुंदर बालों में अंगुलियाँ फिरा रहा हूँ,
एक दिन दूल्हा आएगा और तुम्हें दूर ले जाएगा
ज़ोर से ढोल-नगाड़े बजते हैं
और मधुर शहनाई बज रही है
एक अजनबी का बेटा मुझे लेने आ गया है
मेरी सहेलियो, अपने खिलौने लेकर आओ
चलो हम खेलेंगी क्योंकि अब मैं कभी नहीं खेल पाऊँगी जब मैं एक अजनबी के घर चली जाऊँगी। (दुबे 2001 : 94)

क्रियाकलाप-4

शादी से संबंधित विभिन्न गीतों को इकट्ठा कीजिए। चर्चा कीजिए कि ये किस तरह शादियों में सामाजिक परिवर्तनों और लिंग संबंधों को प्रतिबिंबित करते हैं।

कुछ बुनियादी संकल्पनाओं विशेषतः परिवार, नातेदारी और विवाह को परिभाषित करना

परिवार प्रत्यक्ष नातेदारी संबंधों से जुड़े व्यक्तियों का एक समूह है जिसके बड़े सदस्य बच्चों के पालन-पोषण का दायित्व लेते हैं। नातेदारी बंधन व्यक्तियों के बीच के वे सूत्र होते हैं जो या तो विवाह के माध्यम से या वंश परंपरा के माध्यम से रक्त संबंधियों (माता-पिता, बहन-भाई, संतान आदि) को जोड़ते हैं। विवाह को दो वयस्क (पुरुष एवं स्त्री) व्यक्तियों के बीच लैंगिक संबंधों की सामाजिक स्वीकृति और अनुमोदन के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। जब दो व्यक्तियों का विवाह हो जाता है तो वे परस्पर नातेदार बन जाते हैं। इस प्रकार वैवाहिक बंधन भी व्यापक क्षेत्र में लोगों को जोड़ते हैं। विवाह के माध्यम से अभिभावक, भाई-बहन तथा अन्य रक्त संबंधी जीवन-साथी

क्रियाकलाप-5

क्या आपने कभी वैवाहिक विज्ञापन देखे हैं? अपनी कक्षा को समूहों में विभाजित कीजिए और विभिन्न समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं तथा इंटरनेट को देखिए। अपने निष्कर्षों पर चर्चा कीजिए। क्या आप सोचते हैं कि अंतर्विवाह आज भी प्रचलित मानक है? विवाह की पसंद को समझने में यह आपकी कैसे सहायता करता है? अधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि यह समाज के किस प्रकार के परिवर्तनों की झलक देता है?

के रिश्तेदार बन जाते हैं। जन्म के परिवार को जन्म का परिवार (*फ़ेमिली ऑफ़ ओरियेंटेशन*) कहा जाता है और जिस परिवार में व्यक्ति का विवाह होता है उसे प्रजनन का परिवार (*फ़ेमिली ऑफ़ प्रोक्रिएशन*) कहा जाता है। 'रक्त' के माध्यम से बने नातेदारों को समरक्त नातेदार और विवाह के माध्यम से बने नातेदारों को वैवाहिक नातेदार कहा जाता है। अगले अनुभाग में कार्य और आर्थिक संस्थाओं पर चर्चा में आप देखेंगे कि कैसे परिवार और आर्थिक जीवन गहन रूप से अंत:संबंधित हैं।

3

कार्य और आर्थिक जीवन

कार्य क्या है?

बच्चे और छोटे विद्यार्थी के रूप में हम कल्पना करते हैं कि जब हम बड़ें होंगे तो किस प्रकार का 'कार्य' करेंगे। यहाँ पर 'कार्य' स्पष्ट रूप से सवेतन रोज़गार का द्योतक है। आधुनिक समय में यह 'कार्य' का सर्वाधिक समझ में आने वाला अर्थ है।

वास्तव में यह एक अत्यधिक सरलीकृत विचार है। अनेक प्रकार के कार्य सवेतन रोज़गार के विचार की पुष्टि नहीं करते। उदाहरण के लिए, अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में किए जाने वाले अधिकांश कार्य प्रत्यक्षत: किसी औपचारिक रोज़गार आँकड़ों में नहीं गिने जाते। अनौपचारिक अर्थव्यवस्था का अर्थ है नियमित रोज़गार के क्षेत्र से परे किया जाने वाला कार्य-व्यवहार। इसमें कभी-कभी किए गए कार्य या सेवा के बदले नगद भुगतान किया जाता है लेकिन इसमें वस्तुओं या सेवाओं का प्रत्यक्ष आदान-प्रदान भी अकसर किया जाता है।

हम कार्य को शारीरिक और मानसिक परिश्रमों के द्वारा किए जाने वाले ऐसे सवैतनिक या अवैतनिक कार्यों के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जिनका उद्देश्य मानव की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन करना है।

ऐसा कोई कार्य नहीं था जिसे टिनी की नानी ने जीवन की किसी न किसी अवस्था में आज़माया न हो। अपना कप उठाने की आयु से ही उसने प्रतिदिन दो वक्त भोजन और पहनने के वस्त्र के बदले लोगों के घरों में विभिन्न तरह के बेमेल कार्य करना आरंभ कर दिया था। बेमेल कार्यो का सही अर्थ क्या है ये वे ही जान सकते हैं जिन्होंने हँसने और दूसरे बच्चों के साथ खेलने की आयु में वे कार्य किए हैं। बच्चे का झुनझुना हिलाने से लेकर स्वामी के सिर की मालिश करने तक सभी नीरस कार्य 'बेमेल कार्य' में आ सकते हैं। (चुगताई 2004:125)

अपने प्रेक्षण या साहित्य से या यहाँ तक कि फ़िल्मों से भी इस प्रकार किए गए विभिन्न प्रकार के 'कार्यों' का पता लगाइए और चर्चा कीजिए।

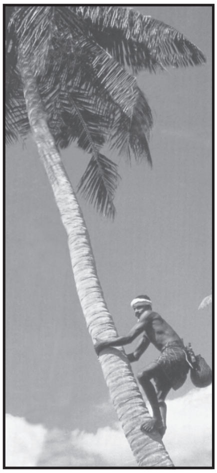

विभिन्न प्रकार के कार्य

> **क्रियाकलाप-6**
>
> ग्राम आधारित व्यवसायों में लगे भारतीयों की संख्या ज्ञात कीजिए और उन व्यवसायों की एक सूची बनाइए।

कार्य के आधुनिक रूप और श्रम विभाजन

पूर्व-आधुनिक समाज में अधिकतर लोग खेतों में कार्य करते थे या पशुओं की देखभाल करते थे। औद्योगिक रूप से विकसित समाज में जनसंख्या का बहुत छोटा भाग कृषि कार्यों में लगा हुआ है और स्वयं कृषि का भी औद्योगीकरण हो गया है। इसका कार्य मानव द्वारा करने की अपेक्षा अधिकांशतः मशीनों द्वारा किया जाने लगा है। भारत जैसे देश में आज भी अधिकतर जनसंख्या ग्रामीण और कृषि कार्यों में या अन्य ग्राम आधारित व्यवसायों में लगी हुई है।

भारत में और भी कई प्रवृत्तियाँ हैं, उदाहरण के लिए सेवा क्षेत्र का विस्तार।

आधुनिक समाजों की अर्थव्यवस्था की एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता है, अत्यधिक जटिल श्रम विभाजन। कार्य असंख्य विभिन्न व्यवसायों में विभाजित हो गया है जिनमें लोग विशेषज्ञ हैं। पारंपरिक समाजों में गैर कृषि कार्य को हस्तकौशल की दक्षता के साथ जोड़ा जाता था। हस्तकौशल लंबे प्रशिक्षण के माध्यम से सीखा जाता था और सामान्यत: श्रमिक उत्पादन प्रक्रिया के आरंभ से अंत तक सभी कार्य करता था।

आधुनिक समाज ने भी कार्य की स्थिति में परिवर्तन देखा है। औद्योगीकरण से पूर्व, अधिकतर कार्य घर पर किए जाते थे और कार्य पूरा करने में परिवार के सभी सदस्य सामूहिक रूप से हाथ बँटाते थे। औद्योगिक प्रौद्योगिकी में विकास, जैसे बिजली और कोयले से मशीन संचालन ने घर और कार्य को अलग करने में योगदान दिया। पूँजीपति उद्योगपतियों के कारखाने, औद्योगिक विकास का केंद्रबिंदु बन गए।

क्रियाकलाप–7

ज्ञात करें कि हाल ही के वर्षों में क्या भारत में सेवा क्षेत्र में परिवर्तन हुआ है। ये क्षेत्र कौन–कौन से हैं?

क्रियाकलाप–8

क्या आपने मुख्य बुनकर को कार्य करते देखा है? ज्ञात करें कि एक शाल बनाने में कितना समय लगता है।

क्रियाकलाप–9

अपने खाने वाले भोजन, रहने वाले मकान में प्रयुक्त सामग्री और पहनने वाले वस्त्रों की सूची बनाइए। ज्ञात कीजिए कि इन्हें किसने और कैसे बनाया।

उद्योगों में नौकरी करने वाले लोग विशिष्ट कार्यों को करने के लिए प्रशिक्षित थे और इस कार्य के बदले उन्हें वेतन मिलता था। प्रबंधक कार्यों का निरीक्षण करते थे क्योंकि उनका कार्य श्रमिक की उत्पादकता बढ़ाना और अनुशासन बनाए रखना था।

आधुनिक समाजों की एक मुख्य विशेषता है परस्पर आर्थिक निर्भरता का असीमित विस्तार। हम सभी बहुत से अन्य श्रमिकों पर निर्भर करते हैं जो हमारे जीवन को बनाए रखने वाले उत्पादों और सेवाओं के लिए संपूर्ण विश्व में फैले हुए हैं। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो आधुनिक समाजों में अधिकतर लोग अपने भोजन व रहने वाले मकान का या अपने उपभोग की भौतिक वस्तुओं का उत्पादन नहीं करते हैं।

कार्य रूपांतरण

औद्योगिक प्रक्रियाएँ उन सरल संक्रियाओं में विभाजित हो गईं जिनका सही समय निर्धारण, संगठन और निगरानी की जा सकती थी। थोक उत्पादन के लिए थोक बाज़ारों की आवश्यकता होती है। साथ ही उत्पादन की प्रक्रिया में कई नवपरिवर्तन हुए। शायद इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण

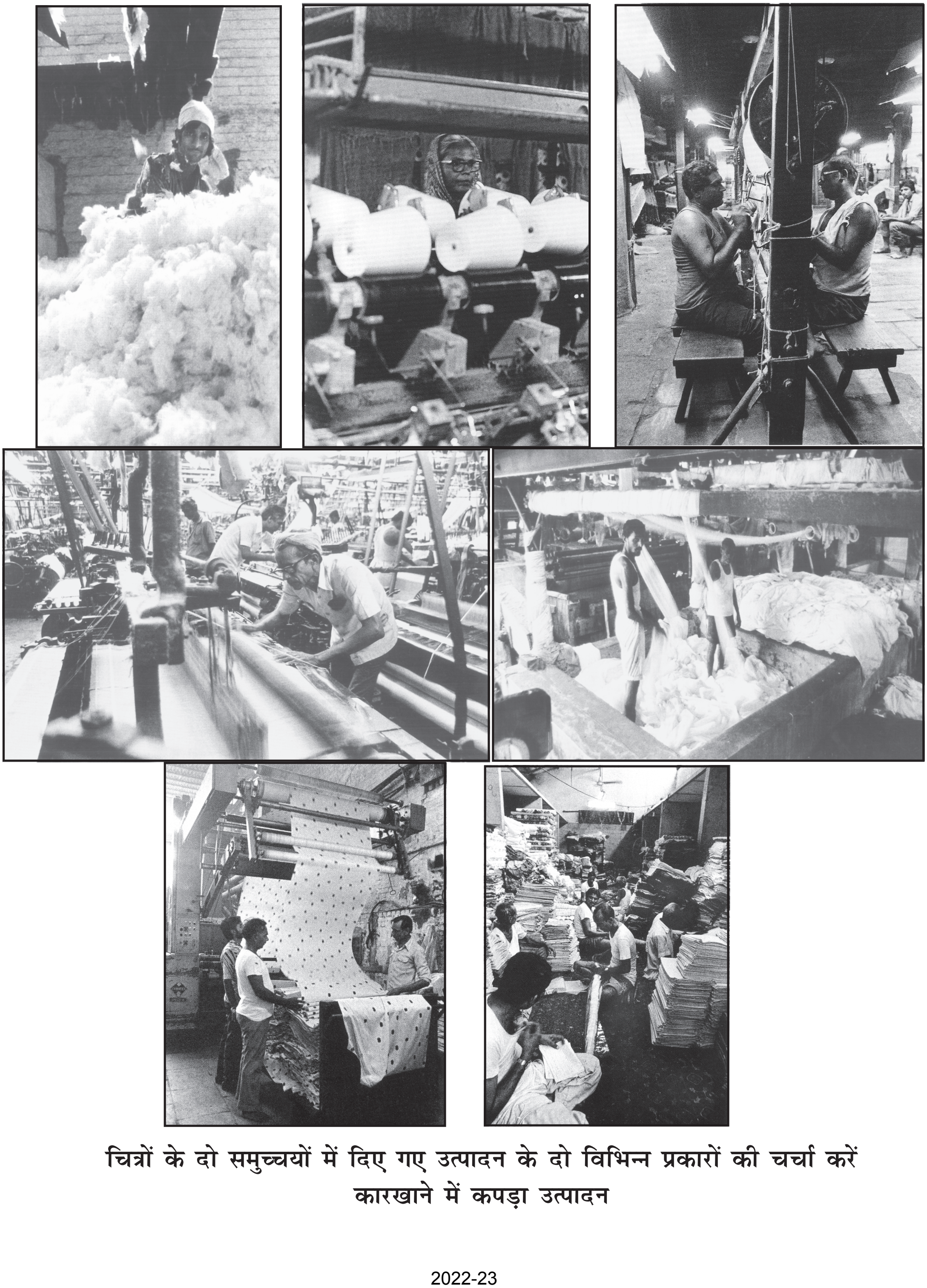

चित्रों के दो समुच्चयों में दिए गए उत्पादन के दो विभिन्न प्रकारों की चर्चा करें

कारखाने में कपड़ा उत्पादन

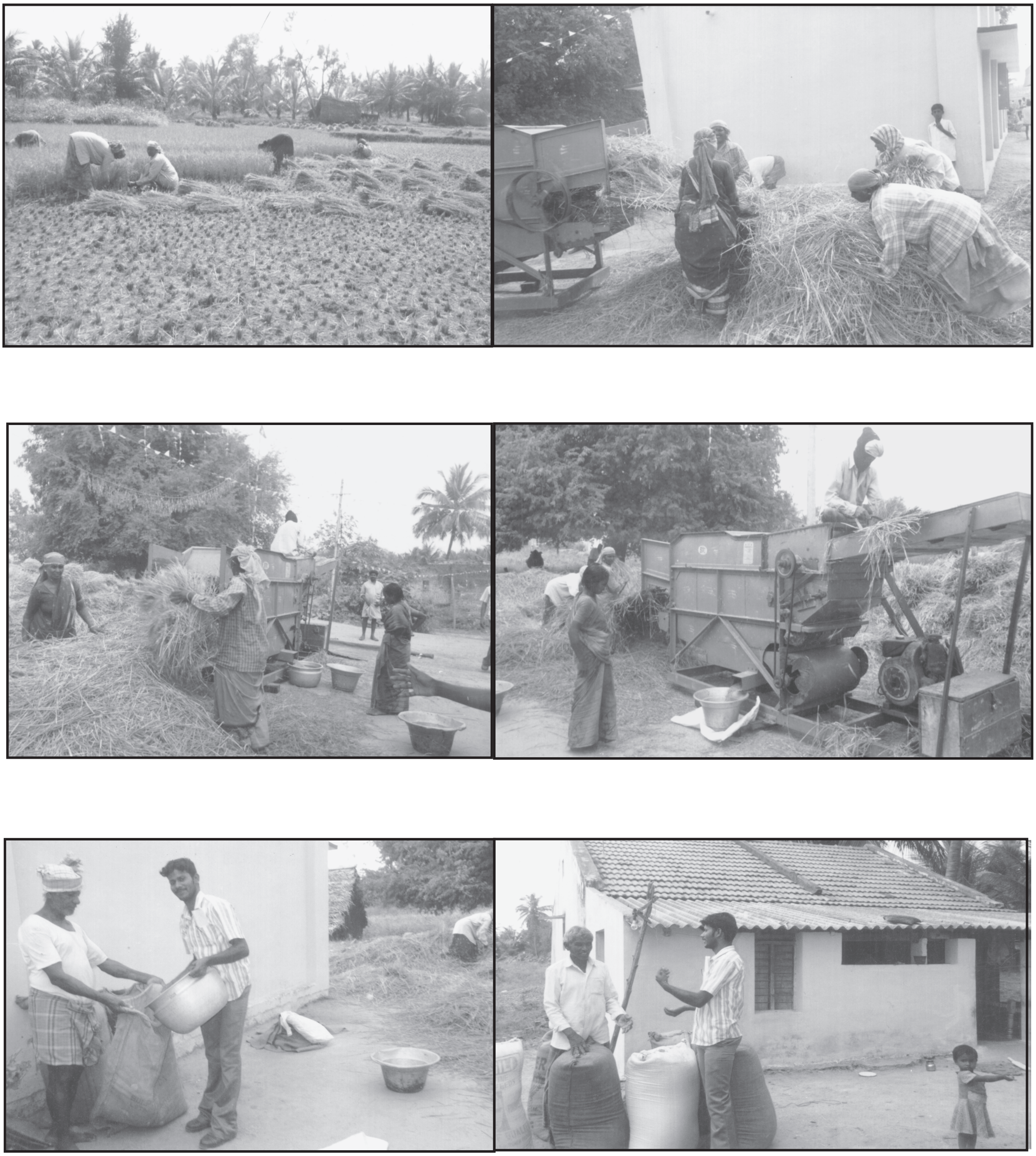

गाँव में धान की कटाई

स्वचलित उत्पादन की कड़ियों (*मूविंग असेंबली लाइन*) का निर्माण था। आधुनिक औद्योगिक उत्पादन के लिए महँगे उपकरणों और निगरानी व्यवस्थाओं के माध्यम से कर्मचारियों की निरंतर निगरानी करना आवश्यक है।

पिछले कई दशकों से 'उदार उत्पादन' और 'कार्य के विकेंद्रीकरण' की तरफ़ झुकाव हुआ है। यह तर्क दिया जाता है कि भूमंडलीकरण के इस दौर में व्यवसाय और देशों के बीच प्रतिस्पर्धा में वृद्धि हो रही है इसलिए व्यवसाय संघ के लिए बदलती बाज़ार अवस्थाओं के अनुकूल उत्पादन को संगठित करना आवश्यक हो गया है। नयी व्यवस्था कैसे कार्य करती है और श्रमिकों पर इसका क्या प्रभाव पड़ सकता है, इसे समझने के लिए बंगलौर में किए गए एक वस्त्र उद्योग के अध्ययन के एक भाग को पढ़िए–

> उद्योग बड़ी आपूर्ति श्रृंखला का एक अनिवार्य भाग होता है और इस प्रकार निर्माता की स्वतंत्रता उस सीमा तक ही सीमित होती है। डिज़ाइनर से लेकर अंतिम उपभोक्ता तक वास्तव में सैकड़ों से अधिक संक्रियाएँ होती हैं। इस श्रृंखला में केवल पंद्रह संक्रियाएँ ही निर्माता के हाथ में होती हैं। वेतन वृद्धि को लेकर किए गए किसी भी गहन आंदोलन से निर्माता अपने कार्यों को अन्य स्थानों पर ले जाएँगे जो यूनियन के नेताओं की पहुँच से दूर होगा... चाहे यह विद्यमान न्यूनतन मज़ूदरी अदायगी का मामला हो या इसमें आगे महत्त्वपूर्ण वेतन वृद्धि का। यहाँ महत्त्वपूर्ण बात है फुटकर विक्रेता का समर्थन प्राप्त करना ताकि उच्चतम वेतन संरचना और उसके प्रभावशाली कार्यान्वयन के लिए सरकार और स्थानीय एजेंसियों पर दबाव बनाया जा सके। इस प्रकार यहाँ पर विचार अंतरराष्ट्रीय विचार मंच बनाने का है (राय चौधरी 2005:2254)।

उपर्युक्त रिपोर्ट का सावधानीपूर्वक अध्ययन करें। देखें कि उत्पादन के नए संगठन तथा देश से बाहर उपभोक्ताओं के एक निकाय ने उत्पादन की अर्थव्यवस्था और राजनीति को किस प्रकार बदल दिया है।

4

राजनीति

राजनीतिक संस्थाओं का सरोकार समाज में शक्ति के बँटवारे से है। सामाजिक संस्थाओं को समझने में दो संकल्पनाएँ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। ये हैं–शक्ति और सत्ता। शक्ति व्यक्तियों या समूहों द्वारा दूसरों के विरोध करने के बावजूद अपनी इच्छा पूरी करने की योग्यता है। इसका अभिप्राय है कि जिनके पास शक्ति होती है वे ऐसा करते हैं क्योंकि दूसरों के पास शक्ति नहीं होती है। किसी समाज में निश्चित मात्रा में शक्ति होती हैं और यदि कुछ लोगों के पास यह है तो दूसरों के पास नहीं होगी। दूसरे शब्दों में, एक व्यक्ति या समूह के पास शक्ति पृथकता में नहीं होती बल्कि यह दूसरों से संबंधित होती है।

शक्ति की यह अभिधारणा स्पष्ट रूप से विस्तृत है और यह परिवार में बड़ों के द्वारा बच्चों को घरेलू ज़िम्मेदारियों में लगाने से लेकर विद्यालय में मुख्य अध्यापक द्वारा अनुशासन

लागू करने तक, कारखाने के मुख्य प्रबंधक द्वारा प्रबंधकों को कार्य आबंटित करने से लेकर अपने दलों के कार्यक्रमों को नियंत्रित करने वाले राजनीतिक नेताओं तक फैला हुआ है। मुख्य अध्यापक को विद्यालय में अनुशासन बनाए रखने की शक्ति है। राजनीतिक दल के अध्यक्ष को दल से किसी सदस्य को निकालने की शक्ति है। प्रत्येक मामले में, व्यक्ति या समूह को उस सीमा तक शक्ति प्राप्त है कि दूसरों को उनकी इच्छा का पालन करना होता है। इस अर्थ में राजनीतिक क्रियाओं या राजनीति का सरोकार शक्ति से है।

लेकिन अपने उद्देश्य की प्राप्ति हेतु यह शक्ति कैसे लागू होती है? क्यों कुछ लोग दूसरों के आदेशों का पालन करते हैं? इन प्रश्नों के उत्तर 'सत्ता' की संबंधित संकल्पना के संदर्भ में प्राप्त किए जा सकते हैं। शक्ति का उपयोग सत्ता के माध्यम से किया जाता है। सत्ता शक्ति का वह रूप है जिसे वैध होने के रूप में स्वीकार किया जाता है अर्थात जिसे सही और न्यायपूर्ण माना जाता है। यह संस्थागत है क्योंकि यह वैधता पर आधारित होती है। सामान्यतः लोग उनकी शक्ति को स्वीकार करते हैं जिनके पास सत्ता होती है क्योंकि वे उनके नियंत्रण को उचित और न्यायपूर्ण मानते हैं। अकसर कुछ विचारधाराएँ होती हैं जो वैधता की इस प्रक्रिया में सहायता करती हैं।

राज्यविहीन समाज

60 वर्षों से भी पूर्व सामाजिक मानवविज्ञानियों द्वारा किए गए राज्यविहीन समाजों के आनुभविक अध्ययन दर्शाते हैं कि बिना आधुनिक सरकारी तंत्र के व्यवस्था कैसे बनाए रखी जाती है। इसके बदले नातेदारी, विवाह और आवास पर आधारित गठबंधनों के द्वारा तथा धार्मिक कृत्यों और समारोहों में मित्रों और विरोधियों की भागीदारी से विभिन्न भागों में विपरीत संतुलन बन जाता था।

जैसाकि हम सब जानते हैं आधुनिक राज्य की एक निश्चित संरचना और औपचारिक कार्यविधियाँ हैं। फिर भी क्या राज्यविहीन समाजों की उपरोक्त वर्णित कुछ अनौपचारिक विशेषताएँ राज्य के समाजों में भी विद्यमान नहीं हैं?

राज्य की संकल्पना

राज्य वहाँ विद्यमान होता है जहाँ सरकार का एक राजनीतिक तंत्र (नागरिक सेवा कार्मिकों के साथ-साथ संसद या कांग्रेस जैसी संस्थाएँ) एक निश्चित क्षेत्र पर शासन करता है। सरकार की सत्ता एक वैध व्यवस्था से समर्थित होती है और जो अपनी नीतियों को लागू करने के लिए सैन्य शक्ति के उपयोग की क्षमता रखती है। प्रकार्यवादी दृष्टिकोण राज्य को समाज के सभी अनुभागों के हितों के प्रतिनिधि के रूप में देखता है। संघर्षवादी दृष्टिकोण राज्य को समाज के प्रभावशाली अनुभागों के प्रतिनिधि के रूप में देखता है।

आधुनिक राज्य पारंपरिक राज्यों से बहुत भिन्न हैं। ये राज्य प्रभुसत्ता, नागरिकता और अकसर राष्ट्रवादी विचारों द्वारा परिभाषित हैं। प्रभुसत्ता का अभिप्राय एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र पर एक राज्य के अविवादित राजनीतिक शासन से है।

क्रियाकलाप-10

पता लगाएँ कि विभिन्न देशों में महिलाओं को मतदान का अधिकार कब मिला। आप ऐसा क्यों सोचते हैं कि मतदान और सार्वजनिक पद पर खड़े होने का अधिकार प्राप्त होने के बावजूद महिलाओं का प्रतिनिधित्व पर्याप्त नहीं है? क्या शक्ति अपने व्यापक अर्थ में संसद और अन्य संस्थाओं में महिलाओं के कम प्रतिनिधित्व को समझने के लिए एक उपयोगी संकल्पना होगी? क्या परिवारों और घरों में विद्यमान श्रम विभाजन महिलाओं की राजनीतिक जीवन में भागीदारी को प्रभावित करता है? ज्ञात करें कि संसद में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण की माँग क्यों की जा रही है।

आरंभ में प्रभुसत्तात्मक राज्यों में नागरिकता के साथ राजनीतिक भागीदारी के अधिकारों का पालन नहीं किया जाता था। इन्हें अधिकांशत: संघर्षों के द्वारा प्राप्त किया गया था जिसने राजतंत्र की शक्तियों को सीमित कर दिया अथवा उन्हें सक्रिय रूप से पदच्युत कर दिया। फ्रांस की क्रांति और हमारा भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष इस तरह के आंदोलनों के दो प्रमुख उदाहरण हैं।

नागरिकता के अधिकारों में नागरिक, राजनीतिक और सामाजिक अधिकार शामिल हैं। नागरिक अधिकारों में व्यक्तियों को अपनी इच्छानुसार रहने की जगह चुनने की, भाषण और धर्म की स्वतंत्रता, अपनी संपत्ति रखने का अधिकार तथा कानून के समक्ष समान न्याय का अधिकार शामिल हैं। राजनीतिक अधिकारों में चुनावों में भाग लेने और सार्वजनिक पद के लिए खड़े होने का अधिकार शामिल है। अधिकतर देशों में सरकारें सर्वव्यापक मतदान के सिद्धांत को स्वीकार करने से इंकार करती थीं। आरंभिक वर्षों में न केवल महिलाओं को अपितु पुरुषों की बड़ी जनसंख्या को भी मतदान से बाहर रखा जाता था क्योंकि एक निश्चित मात्रा में संपत्ति होना इसका मापदंड था। महिलाओं को बहुत समय तक इस अधिकार के लिए इंतज़ार करना पड़ा।

तीसरे प्रकार की नागरिकता के अधिकार सामाजिक अधिकार हैं। इनका सरोकार प्रत्येक व्यक्ति को कुछ न्यूनतम स्तर तक आर्थिक कल्याण और सुरक्षा प्राप्त होने के विशेष अधिकार से है। इन अधिकारों में शमिल हैं स्वास्थ्य लाभ,

क्रियाकलाप-11

सामाजिक अधिकार लागू न करने वाले विभिन्न राज्यों के बारे में सूचनाएँ एकत्रित करें। पता करें कि इसके बारे में क्या सफ़ाई दी जाती है। चर्चा करें और देखें कि क्या आप आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्रों के बीच कोई संबंध देख पाते हैं।

क्रियाकलाप-12

ऐसी घटनाओं की सूचनाएँ एकत्रित करें जो सार्वभौमिक अंत:संबंधित विकास को दर्शाती हैं तथा साथ ही प्रजातीय, धार्मिक और राष्ट्रीय मतभेदों को प्रदर्शित करने वाली घटनाओं के बारे में भी सूचनाएँ एकत्रित करें। चर्चा करें कि राजनीति और अर्थशास्त्र उनमें क्या भूमिका निभा सकते हैं।

बेरोज़गारी भत्ता और न्यूनतम मज़दूरी निर्धारित करने के अधिकार। सामाजिक या कल्याणकारी अधिकारों की व्यापकता ने कल्याणकारी राज्यों को जन्म दिया जो कि पश्चिमी समाजों में दूसरे विश्व युद्ध के समय से स्थापित किए गए थे। पूर्व समाजवादी देशों के राज्यों की इस क्षेत्र में काफ़ी अच्छी व्यवस्था थी। अधिकतर विकासशील देशों में वास्तव में यह विद्यमान नहीं था। आजकल पूरे विश्व में इन सामाजिक अधिकारों को राज्य का उत्तरदायित्व और आर्थिक विकास में रुकावट मानकर इन पर आक्रमण किया जा रहा है।

राष्ट्रवाद को प्रतीकों और विश्वासों के एक समुच्चय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो एक राजनीतिक समुदाय का भाग होने का बोध कराता है। इस प्रकार व्यक्ति को 'ब्रिटिश', 'भारतीय', 'इंडोनेशियाई' या 'फ्रांसीसी' होने में गर्व और बंधुता की भावना का अनुभव होता है। संभवत: व्यक्तियों को हमेशा किसी न किसी प्रकार के सामाजिक समूहों जैसे अपने परिवार, गोत्र या धार्मिक समुदाय के साथ एक प्रकार की पहचान होने का भाव रहता है। तथापि राष्ट्रवाद आधुनिक राज्य के विकास के साथ ही प्रकट हुआ है। समकालीन विश्व सार्वभौमिक बाज़ार के तेज़ी से विस्तार और गहन राष्ट्रवादी भावनाओं और संघर्षों दोनों की वजह से जाना जाता है।

समाजशास्त्रियों की रुचि सिर्फ़ औपचारिक सरकारी तंत्र के अध्ययन में ही नहीं अपितु शक्ति के व्यापक अध्ययन में भी है। इसकी रुचि प्रजाति, भाषा और धर्म आधारित दलों, वर्गों, जातियों एवं समुदायों के बीच शक्ति वितरण में रही है। इसका ध्यान सिर्फ़ विशिष्ट राजनीतिक संघ जैसे राज्य विधानमंडलों, नगर परिषदों और राजनीतिक दलों पर ही नहीं अपितु अन्य संघों जैसे विद्यालयों, बैंकों और धार्मिक संस्थाओं पर भी है, जिनका प्राथमिक उद्देश्य राजनीतिक नहीं है। समाजशास्त्र का विषय क्षेत्र काफ़ी व्यापक है। इसका क्षेत्र अंतर्राष्ट्रीय आंदोलनों (जैसे महिला या पर्यावरण आंदोलन) से लेकर ग्रामीण दलों तक फैला हुआ है।

5

धर्म

धर्म काफ़ी लंबे समय से अध्ययन और चिंतन का विषय रहा है। अध्याय 1 में हमने देखा है कि कैसे समाज के बारे में सामाजिक निष्कर्ष धार्मिक चिंतनों से अलग हैं। धर्म का समाजशास्त्रीय अध्ययन धर्म के धार्मिक या ईश्वरमीमांसीय अध्ययन से कई तरीके से अलग है। पहला, यह धर्म समाज में वास्तव में कैसे कार्य करता है और अन्य संस्थाओं के साथ इसका क्या संबंध है, के बारे में आनुभविक अध्ययन करता है। दूसरा, यह तुलनात्मक पद्धति का उपयोग करता है। तीसरा, यह समाज और संस्कृति के अन्य पक्षों के संबंध में धार्मिक विश्वासों, व्यवहारों और संस्थाओं की जाँच करता है।

आनुभविक पद्धति का अर्थ है कि समाजशास्त्री धार्मिक प्रघटनाओं के लिए निर्णायक उपागम को नहीं अपनाता। तुलनात्मक पद्धति महत्त्वपूर्ण है

क्योंकि यह एक अर्थ में सभी समाजों को एक दूसरे के समान स्तर पर रखती है। यह बिना किसी पूर्वाग्रह और भेदभाव के अध्ययन में सहायता करती है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण का अर्थ है कि धार्मिक जीवन को केवल घरेलू जीवन, आर्थिक जीवन और राजनीतिक जीवन के साथ संबद्ध करके ही बोधगम्य बनाया जा सकता है।

धर्म सभी ज्ञात समाजों में विद्यमान है हालाँकि धार्मिक विश्वास और व्यवहार एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति में बदलते रहते हैं। सभी धर्मों की समान विशेषताएँ हैं–

- प्रतीकों का समुच्चय, श्रद्धा या सम्मान की भावनाएँ;
- अनुष्ठान या समारोह;
- विश्वासकर्ताओं का एक समुदाय।

धर्म के साथ संबद्ध अनुष्ठान विविध प्रकार के होते हैं। आनुष्ठानिक कार्यों में प्रार्थना करना, गुणगान करना, भजन गाना, विशेष प्रकार का भोजन करना (या ऐसा भोजन नहीं करना), कुछ दिनों का उपवास रखना और इसी प्रकार के अन्य कार्य शामिल होते हैं। चूँकि आनुष्ठानिक कार्य धार्मिक प्रतीकों से संबद्ध होते हैं अतः इन्हें प्रायः सामान्य जीवन की आदतों और क्रियाविधियों से एकदम भिन्न रूप में देखा जाता है। दैवीय सम्मान में मोमबत्ती या दीया जलाने का महत्त्व सामान्यतया कमरे में रोशनी करने से एकदम भिन्न होता है। धार्मिक अनुष्ठान प्रायः व्यक्तियों द्वारा अपने दैनिक जीवन में किए जाते हैं। लेकिन सभी धर्मों में विश्वासकर्ताओं द्वारा सामूहिक समारोह भी किए जाते हैं। सामान्यतः ये नियमित समारोह विशेष स्थानों–चर्चों, मस्जिदों, मंदिरों, तीर्थों में आयोजित किए जाते हैं।

धर्म एक पवित्र क्षेत्र है। इस बात पर विचार करें कि विभिन्न धर्मों के सदस्य पवित्र क्षेत्र में प्रवेश करने के पूर्व क्या करते हैं। उदाहरण के लिए, सिर को ढकते हैं, या नहीं ढकते, जूते उतारते हैं, या विशेष प्रकार के वस्त्र धारण करते हैं, आदि। इन सबमें जो बात समान है वह है श्रद्धा की भावना, पवित्र स्थानों या स्थितियों की पहचान और उनके प्रति सम्मान की भावना।

एमिल दुर्खाइम का अनुसरण करने वाले धर्म के समाजशास्त्री उस पवित्र क्षेत्र को समझने में रुचि रखते हैं जिसे प्रत्येक समाज सांसारिक चीज़ों से भिन्न रखता है। अधिकतर मामलों में पवित्रता में अलौकिकता का तत्त्व होता है। अधिकांशतः किसी वृक्ष या मंदिर की पवित्रता के साथ यह विश्वास जुड़ा होता है कि इसके पीछे कोई अलौकिक शक्ति है, इसलिए यह पवित्र है। तथापि यह ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि कुछ धर्मों, जैसे आरंभिक बौद्ध धर्म और कन्फ़्यूशियसवाद में अलौकिकता की कोई संकल्पना नहीं थी लेकिन जिन व्यक्तियों और चीज़ों को वे पवित्र मानते थे उनके लिए उनमें पर्याप्त श्रद्धा थी।

धर्म का समाजशास्त्रीय अध्ययन करते हुए चलिए हम प्रश्न पूछते हैं कि धर्म का अन्य सामाजिक संस्थाओं के साथ क्या संबंध है। धर्म का शक्ति और राजनीति के साथ बहुत निकट का संबंध रहा है। उदाहरण के लिए, इतिहास में समय-समय पर सामाजिक परिवर्तन के लिए धार्मिक आंदोलन हुए हैं, जैसे विभिन्न

जाति–विरोधी आंदोलन या लिंग आधारित भेदभाव के विरुद्ध आंदोलन। धर्म किसी व्यक्ति की निजी आस्था का मामला ही नहीं, अपितु इसका सार्वजनिक स्वरूप भी होता है। और धर्म का यही सार्वजनिक स्वरूप समाज की अन्य संस्थाओं के संबंध में महत्त्वपूर्ण होता है।

हमने देखा है कि समाजशास्त्र शक्ति को कैसे व्यापक संदर्भ मे देखता है। अतः राजनीतिक और धार्मिक क्षेत्र के बीच संबंध को जानना समाजशास्त्रीय हित में है। शास्त्रीय समाजशास्त्रियों का विश्वास था कि जैसे–जैसे समाज आधुनिक होता जाएगा धर्म का जीवन के विभिन्न क्षेत्रों पर प्रभाव कम होता जाएगा। पंथनिरपेक्षता की संकल्पना इस प्रक्रिया का वर्णन करती है। समकालीन घटनाएँ समाज के विभिन्न पक्षों में धर्म की दृढ़ भूमिका की जानकारी देती हैं। आप ऐसा क्यों सोचते हैं कि ऐसा है?

मैक्स वैबर (1864–1920) के महत्त्वपूर्ण कार्य दर्शाते हैं कि समाजशास्त्र सामाजिक और आर्थिक व्यवहार के अन्य पक्षों के साथ धर्म के संबंधों को कैसे देखता है। वैबर का तर्क है कि कैल्विनवाद (प्रोटेस्टैंट ईसाई धर्म की एक शाखा) ने आर्थिक संगठन के साधन के रूप में पूँजीवाद के उद्‌भव और विकास को महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया था। कैल्विनवादियों का विश्वास था कि विश्व की रचना भगवान की महिमा के लिए हुई, इसका अभिप्राय है कि इस संसार में किया गया कोई भी कार्य उसके गौरव के लिए किया जाता है। यहाँ तक कि सांसारिक कार्यों को भी पूजनीय कार्य बना दिया गया। हालाँकि इस से भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कैल्विनवादी भाग्य की संकल्पना में भी विश्वास करते थे जिसका अर्थ है कि कौन स्वर्ग में जाएगा और कौन नर्क में, यह पहले से निश्चित था। चूँकि यह जानने का कोई तरीका नहीं था कि किसे स्वर्ग मिलेगा और किसे नर्क, लोग इस संसार में अपने कार्यों में भगवान की इच्छा के संकेत देखने लगे। इस प्रकार व्यक्ति चाहे जो भी व्यवसाय करता हो यदि वह अपने व्यवसाय में दृढ़ और सफल है तो उसे भगवान की प्रसन्नता का संकेत माना जाता था। अर्जित किया गया धन सांसारिक उपभोग में लगाने के लिए नहीं था अपितु कैल्विनवाद का सिद्धांत मितव्ययता से रहने का था। इसका अर्थ था कि निवेश को एक तरह का पवित्र सिद्धांत माना जाता था। पूँजीवाद के केंद्र में निवेश की संकल्पना है जिसमें पूँजी का निवेश अधिक वस्तुएँ बनाने के लिए किया जाता है जिससे अधिक लाभ होता है जिससे बदले में और अधिक पूँजी उत्पन्न होती है। इस प्रकार वैबर यह तर्क प्रस्तुत करने में सक्षम थे कि धर्म, इस मामले में कैल्विनवाद के आर्थिक विकास पर प्रभाव डालता है।

धर्म का अलग क्षेत्र के रूप में अध्ययन नहीं किया जा सकता। सामाजिक शक्तियाँ हमेशा और अनिवार्यतः धार्मिक संस्थाओं को प्रभावित करती हैं। राजनीतिक बहस, आर्थिक स्थितियाँ और लिंग संबंधी मानक हमेशा धार्मिक व्यवहार को प्रभावित करते हैं। इसके विपरीत, धार्मिक मानक सामाजिक समझ को प्रभावित और कभी–कभी निर्धारित भी करते हैं। विश्व की आधी जनसंख्या महिलाओं की है। इसलिए समाजशास्त्रीय रूप से यह पूछना महत्त्वपूर्ण है कि मानव जनसंख्या के इतने बड़े हिस्से का

धर्म से क्या संबंध है। धर्म समाज का महत्त्वपूर्ण भाग है और अन्य भागों से अनिवार्यत: जुड़ा हुआ है। समाजशास्त्रियों का कार्य इन विभिन्न अंत:संबंधों को उजागर करना है। परंपरागत समाजों में, सामान्यत: धर्म सामाजिक जीवन में एक केंद्रीय हिस्से की भूमिका निभाता है। धार्मिक प्रतीक एवं अनुष्ठान अकसर समाज की भौतिक और कलात्मक संस्कृति से जुड़े होते हैं। समाजशास्त्र धर्म का अध्ययन किस तरह करता है यह जानने के लिए नीचे बॉक्स में दिए गए सारांश का अध्ययन करें।

6

शिक्षा

शिक्षा जीवन पर्यंत चलने वाली प्रक्रिया है जिसमें सीखने की औपचारिक और अनौपचारिक दोनों प्रकार की संस्थाएँ शामिल हैं। हालाँकि यहाँ पर हम केवल विद्यालयी शिक्षा तक अपनी चर्चा को सीमित रखेंगे। हम सभी जानते हैं कि विद्यालय में प्रवेश लेना कितना महत्त्वपूर्ण है। हम यह भी जानते हैं कि हम में से बहुतों के लिए विद्यालय उच्च शिक्षा और अंत में रोज़गार प्राप्त करने की तरफ़ एक महत्त्वपूर्ण कदम है। हममें से कुछ के लिए यह कुछ आवश्यक सामाजिक दक्षताएँ प्राप्त करने का साधन हो सकती है। इन सभी मामलों में सामान्य बात है, शिक्षा की आवश्यकता का महसूस होना।

समाजशास्त्र इस आवश्यकता को समूह की विरासत के प्रेषण / संप्रेषण की प्रक्रिया के रूप में समझता है जो सभी समाजों में पाई जाती है। साधारण समाजों और जटिल आधुनिक समाजों में एक गुणात्मक अंतर है। साधारण समाजों में औपचारिक विद्यालय जाने की आवश्यकता नहीं थी। बच्चे बड़ों के साथ क्रियाकलापों में शामिल होकर प्रथाओं और जीवन के व्यापक तरीके सीख लेते थे। जटिल समाजों में हमने देखा कि श्रम का आर्थिक विभाजन बढ़ रहा है, घर से

> अनेक बाहरी तत्त्वों ने धार्मिक विशेषज्ञों के पारंपरिक जीवन को प्रभावित किया है। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण है नासिक में नए रोज़गारों और शैक्षणिक अवसरों की उत्पत्ति... स्वतंत्रता के बाद, पुरोहितों का जीवन बड़ी तेज़ी से परिवर्तित हो गया था। अब बेटे और बेटियों को विद्यालय भेजा जाता है और पारंपरिक कार्य से भिन्न कार्यों के लिए प्रशिक्षित किया जा रहा है। अन्य तीर्थ स्थानों की तरह नासिक में भी धार्मिक क्रियाकलापों के लिए अन्य अतिरिक्त केंद्र उत्पन्न हो गए। किसी तीर्थयात्री के लिए ताम्र पात्र में गोदावरी का पवित्र जल घर ले जाना सामान्य क्रिया थी। ताम्रकारों ने ये पात्र प्रदान किए। तीर्थयात्री भी इन पात्रों को खरीदते थे जिन्हें घर ले जाकर अपने रिश्तेदारों और मित्रों में उपहार के रूप में बाँटते थे। काफ़ी समय तक नासिक को पीतल, ताम्र और चाँदी के दक्ष दस्तकारों के लिए जाना जाता था... चूँकि उनके पात्रों की माँग अनियमित और अनिश्चित होती थी अत: घर के सभी बड़े सदस्यों को इस कार्य में नहीं लगाया जा सकता था... अनेक दस्तकार छोटे और बड़े दोनों प्रकार के उद्योगों और व्यापारों में चले गए थे। (आचार्य 1974 : 399–401)

कार्यों का विभाजन हो रहा है, विशिष्ट शिक्षा और दक्षता प्राप्त करने की आवश्यकता है, राज्य व्यवस्थाओं, राष्ट्रों और प्रतीकों एवं विचारों के जटिल समुच्चय की भी उत्पत्ति हो रही है। ऐसी परिस्थिति में आप अनौपचारिक शिक्षा कैसे प्राप्त करेंगे? अभिभावक और अन्य बड़े लोग प्राप्त ज्ञान को अगली पीढ़ी तक अनौपचारिक रूप से कैसे संप्रेषित कर सकेंगे? ऐसे सामाजिक संदर्भ में शिक्षा का औपचारिक और सुनिश्चित होना आवश्यक है।

इससे भी आगे आधुनिक जटिल समाज सरल समाजों की तुलना में अमूर्त सार्वभौमिक मूल्यों पर निर्भर करते हैं। यही चीज़ इसे उस सरल समाज से अलग करती है जो परिवार, नातेदार, जनजाति, जाति या धर्म पर आधारित विशिष्ट मूल्यों पर आधारित है। आधुनिक समाजों में विद्यालयों की रचना एकरूपता, मानकीकृत प्रेरणाओं और सार्वभौमिक मूल्यों को बढ़ावा देने के लिए की जाती है। इसे करने के अनेक तरीके हैं। उदाहरण के लिए, कोई 'विद्यालय के बच्चों की एक जैसी वर्दी' की बात कर सकता है। क्या आप मानकीकरण को बढ़ावा देने वाली अन्य विशेषताओं पर विचार कर सकते हैं?

एमिल दुर्खाइम के अनुसार, कोई भी समाज एक 'सामान्य आधार–कुछ विचारों, मनोभावों और व्यवहारों, के बगैर जीवित नहीं रह सकता, जिसे शिक्षा द्वारा सभी बच्चों को बिना भेदभाव के संप्रेषित किया जाना चाहिए, चाहे वे किसी भी सामाजिक श्रेणी के हों' (दुर्खाइम 1956 : 69)। शिक्षा बच्चे को विशिष्ट व्यवसाय के लिए तैयार करने वाली होनी चाहिए और साथ ही वह उसे समाज के मुख्य मूल्यों को समाहित करने में सक्षम बनाने वाली भी होनी चाहिए।

इस प्रकार प्रकार्यवादी समाजशास्त्री सामान्य सामाजिक आवश्यकताओं और सामाजिक मानकों के बारे में बात करते हैं। प्रकार्यवादियों के लिए, शिक्षा सामाजिक संरचना को बनाए रखती है और उसका नवीनीकरण करती है तथा संस्कृति का संप्रेषण और विकास करती है। शैक्षणिक व्यवस्था समाज में व्यक्तियों की अपनी भावी भूमिका के चयन और आवंटन के लिए एक

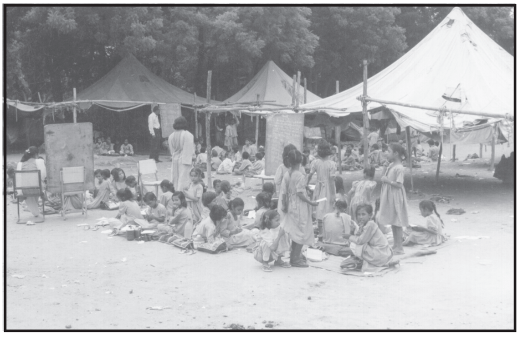

चित्रों की विवेचना करें (दो प्रकार के स्कूल)

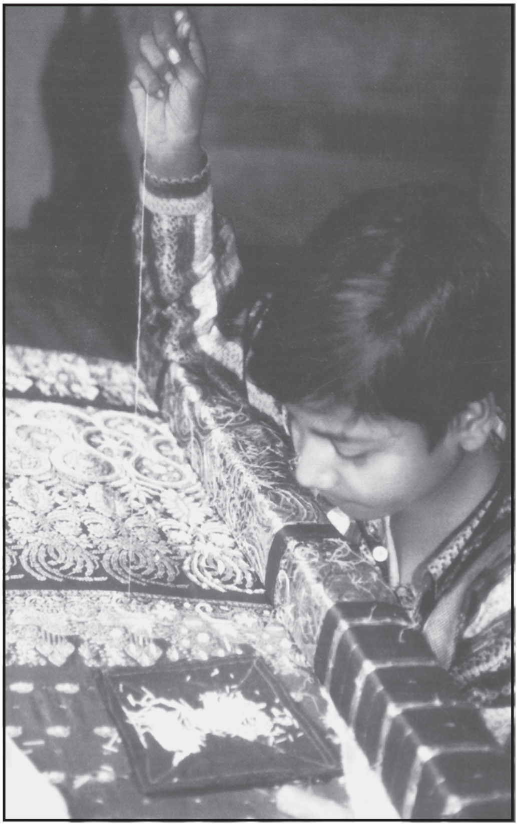

चित्र की विवेचना करें (बाल मजदूरी)

महत्त्वपूर्ण क्रियाविधि है। इसे एक व्यक्ति को खुद को साबित करने का क्षेत्र भी माना जाता है और इसीलिए विभिन्न प्रस्थितियों के किए चयन का साधन भी, जो कि व्यक्तियों की अपनी क्षमताओं के अनुसार होता है। अध्याय 2 में भूमिकाओं और स्तरीकरण की प्रकार्यात्मक समझ पर हमारी चर्चा का पुनः स्मरण करें।

समाज को असमान रूप से विभेदकारी मानने वाले समाजशास्त्रियों के लिए शिक्षा स्तरीकरण के मुख्य अभिकर्त्ता के रूप में कार्य करती है। और शिक्षा के असमान अवसर भी सामाजिक स्तरीकरण का ही परिणाम हैं। दूसरे शब्दों में हम अपनी सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि के आधार पर विभिन्न प्रकार के विद्यालयों में जाते हैं। चूँकि हम किसी एक प्रकार के विद्यालय में जाते हैं, हमें विभिन्न प्रकार के विशेषाधिकार और अंत में वैसे ही अवसर प्राप्त होते हैं।

उदाहरण के लिए, कुछ लोग तर्क देते हैं कि विद्यालयी शिक्षा 'संभ्रात और सामान्य के बीच विद्यमान भेद को और अधिक गहरा करती है।' विशेषाधिकार प्राप्त विद्यालयों में जाने वाले बच्चों में आत्मविश्वास आ जाता है जबकि इससे वंचित बच्चे इसके विपरीत भाव का अनुभव कर सकते हैं (पाठक 2002:151)। तथापि ऐसे और अनेक बच्चे हैं जो विद्यालय नहीं जा सकते या विद्यालय जाना बीच में ही छोड़ देते हैं। उदाहरण के लिए एक अध्ययन बताता है–

क्रियाकलाप–13

छोटे बच्चों के एक विद्यालय के अध्ययन से पता लगता है कि बच्चों ने सीखा है कि–

- 'कार्य संबंधित क्रियाकलाप खेल संबंधित क्रियाकलापों की तुलना में अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।'
- 'कार्य संबंधित क्रियाकलापों में कोई भी या अध्यापक द्वारा निर्देशित सभी क्रियाकलाप होते हैं।'
- 'कार्य अनिवार्य है और खाली समय के क्रियाकलापों को खेल कहा जाता है' (ऐपल 1979:102)।

आप क्या सोचते हैं? चर्चा करें।

इस समय आप विद्यालय में कुछ बच्चे देख रहे हैं। यदि आप फसल के समय विद्यालय आएँ तो आपको अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति का एक भी बच्चा नहीं मिलेगा। जब उनके अभिभावक बाहर कार्य करते हैं तो उन पर घर की कुछ ज़िम्मेदारियाँ आ जाती हैं और इन समुदायों की लड़कियाँ कभी-कभार ही विद्यालय जाती हैं क्योंकि वे विभिन्न प्रकार के घरेलू और आमदनी वाले कार्य करती हैं। उदाहरण के लिए 10 वर्ष की एक लड़की बेचने के लिए गाय का सूखा गोबर उठाती है (प्रतीची 2002 : 60)।

उपरोक्त रिपोर्ट दर्शाती है कि लिंग और जातिगत भेदभाव किस तरह शिक्षा के अवसरों का अतिक्रमण करते हैं। स्मरण करें कि हमने कैसे अध्याय 1 में इस पुस्तक को आरंभ किया था कि किसी बच्चे को अच्छी नौकरी मिलने के अवसर अनेक सामाजिक कारकों से प्रभावित होते हैं। सामाजिक संस्थाओं के कार्य करने के तरीके को समझने की आपकी समझ अब इस प्रक्रिया का सही विश्लेषण करने में आपकी सहायता करेगी।

शब्दावली

नागरिक–एक राजनीतिक समुदाय का सदस्य जिसकी सदस्यता के साथ अधिकार और कर्तव्य दोनों जुड़े होते हैं।

श्रम विभाजन–कार्य का विशिष्टीकरण जिसकी सहायता से विभिन्न प्रकार के कार्यों को एक उत्पादन प्रणाली में लगाया जाता है। सभी समाजों में श्रम विभाजन का कम से कम न्यूनतम आरंभिक स्वरूप होता ही है। तथापि औद्योगिक विकास के साथ पूर्व के उत्पादन प्रणाली की अपेक्षा श्रम विभाजन व्यापक रूप से जटिल हो गया है। आधुनिक विश्व में, श्रम विभाजन अंतरराष्ट्रीय विषय बन गया है।

लिंग–प्रत्येक लिंग के सदस्यों के व्यवहार के बारे में उपयुक्त समझी जाने वाली सामाजिक अपेक्षाएँ। लिंग को समाज के मूल संगठनात्मक सिद्धांत के रूप में देखा जाता है।

आनुभविक जाँच–समाजशास्त्रीय अध्ययन के किसी निश्चित क्षेत्र में की गई तथ्यात्मक जाँच।

अंतर्विवाह–जब विवाह किसी विशेष जाति, वर्ग या जनजातीय समूह में ही किया जाता है।

बहिर्विवाह–जब विवाह कुछ संबंधित समूहों से बाहर किया जाता है।

विचारधारा—ऐसे साझे विचार या आस्थाएँ जो प्रभावशाली समूहों के हितों को न्यायोचित सिद्ध करते हों। विचारधारा ऐसे सभी समाजों में पाई जाती है जिनमें समूहों के बीच व्यवस्थित और गहरे तक पैठी असमानताएँ पाई जाती हैं। विचारधारा की संकल्पना शक्ति की संकल्पना से घनिष्ठ रूप से संबंधित है, क्योंकि वैचारिक व्यवस्थाएँ, समूहों में पाई जाने वाली शक्ति के अंतर को वैध ठहराती हैं।

वैधता—विशेष प्रकार की राजनीतिक व्यवस्था के न्यायपूर्ण और वैधानिक होने की आस्था।

एकविवाह—जिस विवाह में केवल एक पत्नी और एक पति हो।

बहुविवाह—जिस विवाह में पुरुष की एक से अधिक पत्नी और महिला के एक से अधिक पति हों।

बहुपति-प्रथा—जिस विवाह में एक महिला के अनेक पति हों।

बहुपत्नी-प्रथा—जिस विवाह में एक पुरुष की अनेक पत्नियाँ हों।

सेवा उद्योग—निर्मित वस्तुओं की अपेक्षा सेवाओं की उत्पत्ति से संबंधित उद्योग जैसे पर्यटन उद्योग।

राज्य समाज—ऐसा समाज जिसमें औपचारिक सरकारी तंत्र हो।

राज्य विहीन समाज—ऐसा समाज जिसमें सरकार की औपचारिक संस्थाओं का अभाव हो।

सामाजिक गतिशीलता—एक प्रस्थिति या व्यवसाय से दूसरी प्रस्थिति या व्यवसाय में जाना।

प्रभुसत्ता—एक निश्चित क्षेत्र में राज्य का अविवादित राजनीतिक शासन।

अभ्यास

1. ज्ञात करें कि आपके समाज में विवाह के कौन से नियमों का पालन किया जाता है। कक्षा में अन्य विद्यार्थियों द्वारा किए गए प्रेक्षणों से अपने प्रेक्षण की तुलना करें तथा चर्चा करें।
2. ज्ञात करें कि व्यापक संदर्भ में आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिवर्तन होने से परिवार में सदस्यता, आवासीय प्रतिमान और पारस्परिक संपर्क का तरीका कैसे परिवर्तित होता है, उदाहरण के लिए प्रवास।
3. 'कार्य' पर एक निबंध लिखिए। कार्यों की विद्यमान श्रेणी और ये किस तरह बदलती हैं, दोनों पर ध्यान केंद्रित करें।
4. अपने समाज में विद्यमान विभिन्न प्रकार के अधिकारों पर चर्चा करें। वे आपके जीवन को कैसे प्रभावित करते हैं?
5. समाजशास्त्र धर्म का अध्ययन कैसे करता है?

6. सामाजिक संस्था के रूप में विद्यालय पर एक निबंध लिखिए। अपनी पढ़ाई और वैयक्तिक प्रेक्षणों, दोनों का इसमें प्रयोग कीजिए।
7. चर्चा कीजिए कि सामाजिक संस्थाएँ परस्पर कैसे संपर्क करती हैं। आप विद्यालय के वरिष्ठ छात्र के रूप में स्वयं के बारे में चर्चा आरंभ कर सकते हैं। साथ ही विभिन्न सामाजिक संस्थाओं द्वारा आपके व्यक्तित्व को किस प्रकार एक आकार दिया गया, इसके बारे में भी चर्चा करें। क्या आप इन सामाजिक संस्थाओं से पूरी तरह नियंत्रित हैं या आप इनका विरोध या इन्हें पुन:परिभाषित कर सकते हैं?

सहायक पुस्तकें

आचार्य, हेमलता. 1974. 'चेंजिंग रोल ऑफ रिलिजियस स्पेशलिस्ट इन नासिक–द पिलग्रिम सिटी', राव, एम.एस. (सं.). *एन अर्बन सोशियोलॉजी इन इंडिया : रीडर एंड सोर्स बुक.* ओरिएंट लोंगमैन, नयी दिल्ली, पृ. सं. 391–403.

एपल, माइकेल डब्ल्यू. 1979. *आइडियोलॉजी एंड करिकुलम.* रूटलेज़ एंड कीगन पॉल, लंदन।

चुगताई, इस्मत. 2004. *टिनीज ग्रेनी इन कंटेंप्रेरी इंडियन शॉर्ट स्टोरीज़, सीरिज–1.* साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली।

दुबे, लीला. 2001. *ऐंथ्रोपोलॉजिकल एक्सप्लोरेशंस इन जैंडर : इंटरसेक्टिंग फील्ड्स.* सेज पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली।

दुर्खाइम, एमिल. 1956. *एज्यूकेशन एंड सोशियोलॉजी.* द फ्री प्रेस, न्यूयार्क।

पाठक, अविजीत. 2002. *सोशल इप्लिकेशंस ऑफ़ स्कूलिंग : नॉलेज, पेडागागी एंड कांशेएसनेस.* रेनबो पब्लिशर्स, दिल्ली।

प्रतीची, 2002. द *प्रतीची एज्युकेशन रिपोर्ट.* प्रतीची ट्रस्ट, दिल्ली।

राय चौधरी, सुप्रिया. 2005. 'लेबर एक्टिविज़्म एंड वीमन इन द अनऑर्गेनाइज़्ड सेक्टर : गार्मेंट एक्सपोर्ट इंडस्ट्री इन बंगलौर', *इक्नोमिक एंड पोलिटिकल वीकली.* 28 मई–4 जून, पृ.सं. 2250–2255.

शाह, ए.एम. 1998. *फ़ेमिली इन इंडिया : क्रिटिकल एसेज़.* ओरिएंट लोंगमैन, हैदराबाद।

सिंह, योगेंद्र. 1993. *सोशल चेंज इन इंडिया : क्राइसेज़ एंड रेज़िलिएंस.* हर–आनंद पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली।

ओबरॉय, पेट्रिशिया. 2002. 'फ़ेमिली, किनशिप एंड मैरिज इन इंडिया', *स्टूडेंट्स ब्रिटानिका*–इंडिया. वोल्यूम–6, एंसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका प्राइवेट लिमिटेड, नयी दिल्ली, पृ सं. 145–155.